लोकतांत्रिक समाजवादी धारा और जयप्रकाश नारायण का अवदान

डॉ0 मधुसूदन सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, डॉ0 राम मनोहर लोहिया पी0जी0 कालेज,
नौतनवाँ महराजगंज (उ0प्र0)
E-mail: madhusoodangkp79@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 28.07.2020
Approved:27.09.2020

डॉ0 मधुसूदन सिंह

लोकतांत्रिक समाजवादी धारा और जयप्रकाश नारायण का अवदान

RJPP 2020,
Vol. XVIII, No. II,
pp.160-166
Article No. 19

Online available at *:*
https://anubooks.com/?page_id=6391

सारांश

जे.पी. का चिंतन मूलतः व्यक्ति और समाज के ऐच्छिक संबंधों तथा नैतिकता की सर्वोपरिता पर आधारित है। वे मार्क्सवाद से प्रभावित होकर भी भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठताओं से अवगत थे। उन्हें राजनीति के आर्थिक आधारों का गहरा ज्ञान था। गांधी उन्हें समाजवाद का सबसे बड़ा भारतीय विद्वान मानते थे। वे समाजवाद को सामाजिक–आर्थिक पुनर्निमाण का एक सम्पूर्ण सिद्धांत मानते थे। वे व्यक्ति, समुदाय और समाज को शक्तिशाली बनाना चाहते थे। असामनता का मूल कारण सामाजिक–आर्थिक क्षेत्रों में व्याप्त असमानता है। अतएव व्यक्ति को सशक्त बनाने वाली अर्थव्यवस्था होनी चाहिए। समाजवाद का उद्देश्य सम्पूर्ण समाज का सामंजस्यपूर्ण एवं संतुलित विकास है। सन् 1964 ई. के बाद जे.पी. के विचारों में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। उन्होंने भारत में लोकतांत्रिक माध्यम से समाजवाद लाने के लिए निरंतर चिंतन एवं संघर्ष किया था।

समाजवादी धारा और जे0पी0 के अवदान से यह शोधपत्र प्रस्तुत है।

प्रस्तावना

समाजवाद के मानवीय एवं लोकतंत्रीय रूप के पैरोकार जयप्रकाश नरायण ने जहाँ समाजवाद के अग्रणी प्रवक्ता एवं विचारक के रूप में अपनी श्रेश्ठ पहचान बनाई, वहीं एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में देश की आजादी में उनका अप्रतिम योगदान रहा। यह लोकतंत्र के सच्चे प्रहरी भी थे। यही कारण है कि जब इन्दिरा गांधी ने आपातकाल की घोषणा की, तो उन्हें लगा कि भारत में लोकतांत्रिक मूल्यों का हनन हो रहा है और इसे रोकने के लिए वह आगे आए तथा अपनी अगुवाई में आपातकाल विरोधी आन्दोलन को सफल बनाया। इस तरह उन्होंने देश के लिए दोहरी भूमिका निभाई। पहली भूमिका देश की आजादी के लिए थी और दूसरी भूमिका आजाद भारत में लोकतंत्र की बहाली के लिए थी। उनकी ये दोनों ही भूमिकाएँ अत्यंत महत्वपूर्ण एवं सराहनीय रही। वह सच्चे अर्थों में एक महान देश–भक्त एवं लोकनायक थे।

जय प्रकाश नारायण या जेपी सर्वोदयवादी एवं समाजवादी लोकतांत्रिक भारत के लोकनायक हैं। उनके जीवन का मूल मंत्र था– बुराईयों के विरूद्ध निरंतर और समग्र–क्रांति। उन्होनें पहली बार कांग्रेस के एक छत्र–शासन को सन् 1977 में समाप्त किया और देश को समग्र–क्रांति की नई दिशा दिखाई वे गांधी के कट्टर अनुयायी थे और लगभग पचास वर्षो तक भारत के सार्वजनिक जीवन पर छाये रहे। उनकी मूल चिंता थी कि ''वर्तमान राजनीति में विश्रृंखलता फैलती जा रही है। दलों के आदर्शों की अपेक्षा उनका स्वार्थपूर्ण, दृष्टिकोण, आदर्शों का अमूल्यन, व्यक्तिगत तथा विशेष हितों के लिए दल–निष्ठा का परिवर्तन, विधायकों का क्रय–विक्रय, दल की आंतरिक अनुशासनहीनता, दलों के बीच अवसरवादी साठ–गांठ तथा सरकार की अस्थिरता आदि आज के विचारणीय विषय बन गये है।'' सन् 1934 में उन्होंने कांग्रेस–समाजवादी पार्टी गठित की और कांग्रेस को समाजवाद पर आधारित आर्थिक कार्यक्रम अपनाने पर जोर डाला। वे कांग्रेस तथा बाद में कम्युनिस्ट पार्टी को अपनी विचारधारा के अनुकूल न पाकर स्वतंत्र रूप से कार्य करने लगे। अपनी पार्टी को वे लोकतंत्रात्मक समाजवादी पार्टी कहने लगे।

जय प्रकाश नारायण की लोकतंत्र में दृढ़ आस्था थी। वे परम्परागत लोकतंत्र के बजाय लोकशाही या लोकराज के समर्थक थेः ''लोकशाही में मुख्य बात यह है कि दण्ड–शक्ति कम से कम होनी चाहिए और लोक–शक्ति का विकास होते रहना चाहिए। सरकार और सरकार का काम गौण तथा जनता ओर जनता का काम मुख्य हो, क्योंकि लोकशाही में जनता स्वयं ही अपनों में से अपनी पसंद की सरकार बनाती है और कर आदि देकर उसे टिकाए रहती है।

वे वर्तमान संसदीय पद्धति को ठीक नहीं समझते तथा दलों की भूमिका से असंतुष्ट थे। वे निर्वाचन पद्धति को भी दोषपूर्ण मानते है। इस तरह वे परम्परागत लोकतंत्र अथवा सत्तावादी राजनीति में विश्वास न करके दलविहीन लोकतंत्र में विश्वास करते थे। इस क्षेत्र में वे मानवेन्द्रनाथ राय के विचारों से प्रभावित थे। दलगत राजनीति जनता को असहाय बना देती है। उसी से भ्रष्टाचार, कुशासन और अनैतिकता फैलती है। बहुसंख्यक दल सत्ता को अपने हाथों में केन्द्रित

कर के स्वेच्छाचारी बन जाता है। राजनीतिक दल उन्हीं मुद्दों को उठाते हैं जिनसे उनके राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति होती हो। लोकनायक दलीय राजनीति के स्थान पर विकेन्द्रीकरण चाहते हैं। स्थानीय स्तर पर प्रतिनिधियों का जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन होना चाहिए। ग्राम–सभाओं द्वारा मतदाता–परिषदें निर्वाचित की जाएं। ये परिषदें उम्मीदवारों का चुनाव करें। बहुमत प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को केन्द्र या राज्य की विधायिकाओं में भेजा जाय। निर्वाचन में समय, षक्ति और धन की बचत के लिए एक स्थान के लिए एक ही व्यक्ति को उम्मीदवार बनाया जाय। इससे सर्वाधिक लोकप्रिय व्यक्ति ही निर्वाचित हो सकेगा। वे लोकतंत्र को सामुदायिक समाज एवं विकेन्द्रीयकरण पर आधारित करना चाहते है। पश्चिमी लोकतंत्र अल्पतंत्र है और व्यक्तिवादी समाज पर स्थित है। निर्वाचन, मत–प्राप्त करने का माध्यम मात्र है। वे समाज की सर्वोपरिता स्थापित करता है। समाज जाति, वर्ग, रक्त, वंश, धर्म, राजनीति आदि में विभाजित व्यक्तियों में एकजुटता लाता है। जयप्रकाश का समाज पिरामिड की भांति है। वह नीचे के व्यापक स्तर–ग्रामीण समाज, क्षेत्र, जिला, प्रांत तथा राष्ट्र के ऊपर के स्तर तक जाता है। प्रत्येक स्तर अपना सामुदायिक जीवन विकसित कर सकता है। ज्यों–ज्यों हम सामुदायिक जीवन के आंतरिक वृत्त (सर्किल) से बाहर के वृत्त की ओर जाते है। तो बाह्य समुदायों के कार्य सीमित होते हैं। राष्ट्र या राज्य के पास प्रतिरक्षा, विदेश संबंध, मुद्रा, अंतर्राज्यीय, संबंधों का समन्वयन, व्यवस्थापन आदि ही रह जाते है।

वे लोकतंत्र की मूल समस्या नैतिक–समस्या को मानते है। उनके अनुसार, लोकतंत्र के लिए आवश्यक गुण या नैतिकता सत्य, अहिंसा, स्वतंत्रता, अत्याचार–प्रतिकार की शक्ति, सहयोग, उत्तदायित्व की भावना, समानता आदि गुणों में निहित है। पूंजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद, भौतिकवाद आदि लोकतंत्र के अनुकूल नहीं होते। वे क्रांतिकारी समाजवाद के बजाय लोकतांत्रिक समाजवाद चाहते हैं। समाजवाद की स्थापना लोकतांत्रिक तरीकों से की जा सकती है। स्वयं मार्क्स ने भी इसे स्वीकार किया है। समाजवाद के द्वारा अनेक सामाजिक–आर्थिक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। साध्य–साधनों में एकता एवं घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। समाजवाद की सफलता के लिए लोकतांत्रिक राज्य अनिवार्य होता है। लोकशाही में समाजवाद को निम्नतम स्तरों तक ले जाया जाता है। उसमें नौकरशाही 'स्वामी' ने होकर 'सेवक' बनी रहती है।

मात्र उद्योगों के राष्ट्रीयकरण से नौकरशाही पनपती है। समाजवादी अर्थव्यवस्था विकेन्द्रित होती है। गृह एवं लघु उद्योगों, कुटीर उद्योगों आदि के द्वारा उत्पादन का लक्ष्य प्राप्त किया जाना चाहिए। उद्योगों पर स्वामित्व का भी ग्राम–पंचायतों तथा नगर–निकायों तक विकेन्द्रीकरण होना चाहिए। इस दृष्टि से उनके विचार राममनोहर लोहिया के समान है। किन्तु वे समाजवादी समाज को लाने के लिए शांतिपूर्ण लोकतांत्रिक उपायों को आवश्यक नहीं मानते। संवैधानिक एवं संसदात्मक पद्धतियों से ही समाजवाद लाना अनिवार्य नहीं है। वे अहिंसक जन–आंदोलन के द्वारा भी, भले ही वह असंवैधानिक हो, जनता के पूर्ण सहयोग से समाजवाद लाना उचित मानते हैं। किन्तु अन्य अनुचित साधनों या हिंसा से साध्य प्राप्त नहीं किये जाने

चाहिए। व्यक्ति की इच्छाएं सीमित होनी चाहिए। समाज के व्यापक हित की दृष्टि से, व्यक्ति की भौतिक आवष्यकताओं पर नियंत्रण किये बिना समानता, स्वतंत्रता एवं भ्रातृत्व नहीं लाया जा सकता। सामाजिक नियंत्रण आवश्यक है और कोरे आत्म–नियंत्रण द्वारा व्यक्ति और व्यक्ति के मध्य, तथा व्यक्ति समूहों तथा राष्ट्रों के मध्य संघर्षों को टाला नहीं जा सकता। ''मेरा अतीत जीवन–पथ किसी बाहरी व्यक्ति को अस्थिरता तथा अंधान्वेषण का एक टेढ़ा–मेढ़ा वक्र, रेखाचित्र जैसा प्रतीत होगा लेकिन जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ तो उसमें मुझे विकास की अटूट श्रृंखला दिखाती पड़ती है।'' समाजवाद से सर्वोदय की ओर उनके विचारों के अध्ययन में उनकी यह अटूट श्रृंखला दिखती है। जे.पी. के मत का समाजवाद केवल पूंजीवाद–विरोध नहीं है, न वह राज्यवाद है। उद्योगों को राष्ट्रीयकरण और कृषि का समूहीकरण समाजवादी अर्थरचना के महत्वपूर्ण पहलू हैं वे अपने–आप में समाजवाद नहीं है। समाजवाद के अन्तर्गत मनुष्य के द्वारा मनुष्य का षोषण नहीं होगा। अन्याय और उत्पीड़न नहीं होगा, असुरक्षा नहीं रहेगी, उसके अन्तर्गत सम्पत्ति एवं सेवाओं तथा अवसरों का समान वितरण होगा। राष्ट्रीकृत एवं समूहीकृत अर्थ रचना में भी शोषण, अन्याय, उत्पीड़न, असुरक्षा एवं घोर विषमताएं हो सकती है। ऐसी अर्थरचना के अन्तर्गत, यदि समस्त राजनीतिक एवं आर्थिक सत्ता एक अपरिवर्तनीय एवं आत्म–परीक्षणकारी दलीय अल्पतंत्र के हाथों में केन्द्रित हो जाती है तो फिर समाजवाद नहीं उसका दमन होगा, क्रांति नहीं उसकी प्रतिक्रिया पनपेगी। जो साम्यवादी ऐसे अल्पतंत्रीय समाज में विश्वास करता है और उसके लिए कार्य करता है, वह क्रांतिकारी होने के बजाय प्रतिक्रियावादी है।''

वे गांधी जी को समाजवाद का पर्याय नहीं मानते। किन्तु भारत में समाजवाद गांधीवाद को भुलाकर नहीं लाया जा सकता। गांधीवाद प्रतिक्रियावादी न होकर सामाजिक चिंतन तथा सामाजिक परिवर्तन क पद्धतिशास्त्र को महान योगदान है। उसने नैतिक आधार प्रदान किये हैं। दार्शनिक दृष्टि से गांधीवाद धर्मनिरपेक्ष तथा धार्मिक एवं आध्यात्मिक आधार लिए हुए हैं, किन्तु व्यवहार में वह समाजवाद से भिन्न मूल्यों को स्थापित नहीं करता। सबसे बढ़कर गांधीवाद संघर्ष की क्रांतिकारी तकनीक प्रदान करता है। गांधी जी की सविनय अवज्ञा तथा सत्याग्रह की पद्धति में शोषित, दलित तथा पीड़ित मानव ने एक नयी तकनीक प्राप्त की है, जो संघर्ष को शांतिपूर्ण सीमा से आगे ले जाते हुए उसकी मांगो को प्रभावी एवं समुचित अभिव्यक्ति प्रदान करता है। गांधी जी ने ही आर्थिक एवं राजनीतिक विकेन्द्रीकरण को प्रबल आधार प्रदान किया। इसकी ओर परम्परागत समाजवादियों एवं साम्यवादियों का ध्यान ही नहीं गया। किन्तु जयप्रकाश के आर्थिक विकेन्द्रीयकरण का अर्थ न तो विज्ञान और तकनीक को तिलांजित देना है और न ही आधुनिक उत्पादन की तकनीकों द्वारा किये जाने वाले शोषण को स्वीकार करना है। इसी तरह से अपने राजनीतिक विकेन्द्रीयकरण में न तो राज्य को दुर्बल बनाना चाहते हैं और न ही सुरक्षापूर्ण जीवन का अभाव उत्पन्न करना। गांधी जी के लगभग सभी रचनात्मक कार्यक्रम समाजवाद को प्रबल बनाने में सहायक है। गांधी जी का अहिंसात्मक जन–आंदोलन, जयप्रकाश के अनुसार एक नया क्रांति का मार्ग एवं समाजवाद और साम्यवाद की तुलना में एक तीसरा विकल्प प्रस्तुत करता है। गांधीवाद न तो सत्ता हथियाने पर ध्यान देता है और न राज्य–शक्ति

पर निर्भर रहता है। वह सीधा जनता तक जाता है और उसके जीवन में एक नया क्रांति लाता है। व्यक्तियों के माध्यम से समाज के जीवन में क्रांति का श्री गणेश करता है। राज्य–शक्ति का समर्थन तभी किया जाता है जब जन–शक्ति या लोकशक्ति का निर्माण सुनिश्चित हो। वह दल, वर्ग और सम्प्रदाय के संकीर्ण घेरों से बाहर तक जाता है तथा सभी को परिवर्तित करने एवं क्रांतिकारी बनने आह्वान करना है। गांधीवाद वर्गों का एक–दूसरे के निकट लाकर वर्ग–भेद को ही मिटा देना चाहता है। वह राज्यविहीन समाज की स्थापना के लिए निर्भरता का आग्रह करता है, जबकि समाजवाद राज्यविहीन समाज की संस्थापना का लक्ष्य लेकर भी राज्य को सामाजिक क्रांति का अगुआ बनाकर सर्वशक्तिमान बना देता है। इसी तरह समाजवादियों का सत्याग्रह गांधीवादी–सत्याग्रह नहीं है। सत्याग्रह हृदय–परिवर्तन की संभावना में पूर्ण निष्ठा पर आधारिता होता है, भले ही वह सफल नहो।

भारत देश आजाद तो हो गया, किन्तु आजादी के सपने पूरे नहीं हुए। इन्दिरा गांधी की प्रशासनिक नीतियों के कारण लोकतांत्रिक मूल्यों के क्षरण का चरण वर्ष 1975 में आपातकाल की घोषणा के रूप में सामने आया, तो जेपी फिर जाग उठे। इस लोकनायक के पीछे–पीछे युवकों–छात्रों का हुजूम निकल पड़ा। उन्होंने देश के युवकों को सम्पूर्ण क्रान्ति का सन्देश कुछ इस प्रकार दिया–''भ्रष्टाचार मिटाना, बेरोजगारी दूर करना, शिक्षा में क्रांति लाना आदि ऐसी चीजें हैं, जो आज की व्यवस्था से पूरी नहीं हो सकती, क्योंकि वे इस व्यवस्था की ही उपज है। ये सभी पूरी हो सकती हैं, जब सम्पूर्ण व्यवस्था ही बदल दी जाए और सम्पूर्ण व्यवस्थाके परिवर्तन के लिए 'सम्पूर्ण क्रान्ति' आवश्यक है।'' इस सम्पूर्ण क्रान्ति का आह्वान करने वाले लोकनायक को आपातकाल के दौरान जेल में यातनाएँ सहनी पड़ी। किन्तु उन्होंने इन्दिरा गांधी की सत्ता को अपनी सम्पूर्ण क्रान्ति से उखाड़ फेंका।

एक समाजवादी चिन्तक के रूप में लोकनायक ने राजनीति के आर्थिक आधार पर खास जोर दिया। उनका यह मानना था कि जब तक मनुष्य की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती, उससे सांस्कृतिक सृजनात्मकता की आशा करना व्यर्थ है। यानी यदि जनसाधारण के लिए आवश्यक भोजन, वस्त्र और आवास की व्यवस्था नहीं की जाती, तो वह कला, साहित्य और विज्ञान के क्षेत्रों में मौलिक योगदान की क्षमता कहाँ से लायेंगे ? उन्होंने इस समस्या के समाधान के लिए उस समाजवाद को अपनाए जाने का सुझाव दिया, जो विस्तृत नियोजन की माँग करता है। उन्होंने उत्पादन के साधनों के समाजीकरण को इसकी पहली शर्त के रूपमें निरूपित किया।

जे.पी. ने समाजवाद को 'आर्थिक–सामाजिक पुनर्निमाण का सिद्धांत' बताया ताकि समाज का समन्वित विकास हो सके। उसका मुख्य आधार उत्पादन के साधनों का समाजीकरण है ताकि धन के असमान वितरण तथा शोषण से उत्पन्न बुराइयों को दूर किया जा सके। ऐसे समाजवाद को लाने के लिए भारत के समाजवादियों द्वारा स्वाधीनता–संग्राम में डटकर भाग लिया जाना आवष्यक था। जे.पी. ने बताया कि समाजवाद भारतीय संस्कृति विरोधी नहीं है। भारतीय संस्कृति की अनेक विशेषताएं एवं मूल्य समाजवादपरक है।

प्राचीन और अर्वाचीन राजनीतिक विचारकों की तरह जयप्रकाश नारायण कोई निष्क्रिय राजनीतिक चिन्तक नहीं थे। उनका जीवन एक सतत् सक्रिय राजनीतिक चिन्तक और उसे व्यवहारिक रूप प्रदान करने वाले कर्मयोगी के जीवन का ज्वलन्त उदाहरण है। मार्क्सवादी के रूप में जो उनके चिन्तन की विकास यात्रा प्रारम्भ हुई, वह गाँधीवाद, सर्वोदय और समग्र क्रान्ति की अवधारणा के व्यवहारिक प्रतिपादन पर आकार समाप्त हुई। उनके चिन्तन के इस विकास की विशिष्टता के कारण उनके कुछ आलोचकों को उनके चिन्तन में स्थिरता और प्रतिबद्धता का अभाव दृष्टिगत हुआ लेकिन उनके चिन्तन की यह आलोचना वस्तुपरक और व्यवहारिक नहीं है। उनके लिए चिन्तन कोई अपने आप में साध्य नहीं था वरन् वह एक साधना था, एक ऐसा साधन जिसके माध्यम से वे एक ऐसी समाज–व्यवस्था की स्थापना के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहे जो समता, स्वतन्त्रता और बन्धुत्व के मानववादी सिद्धान्तों पर आधारित हो तथा जिसकी प्राप्ति अनिवार्य रूप से सत्य और अहिंसा के साधनों के माध्यम से सम्भव हो। यही आदर्श उनके निरन्तर परिवर्तित होने वाले चिन्तन की विकास यात्रा का स्थायी आधार था तथा उसे अश्रृंखलाबद्ध दिखते हुए भी श्रृंखलाबद्ध सिद्ध करता है। उनके चिन्तन की इसी विशिष्टता को स्पष्ट करते हुए स्वयं उन्होंने उसके सम्बन्ध में कहा था कि ''मेरा अतीत जीवन–पथ किसी बाहरी व्यक्ति को अस्थिरता तथा अन्वेशण का एक टेढ़ा–मेढ़ा वक्र रेखाचित्र जैसा प्रतीत होगा लेकिन जब मैं पीछे मुड़कर उस पर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे उसमें विकास की एक अटूट श्रृंखला दृष्टिगत होती है।

डॉ0 मधुकर श्याम चतुर्वेदी के अनुसार ''जयप्रकाश के विचारों में 'स्वतंत्रता' तथा 'मताग्रह–मुक्ति' का विलक्षण संयोग था। प्रत्येक विचार की स्वतंत्र समीक्षा की उनकी प्रवृत्ति के कारण ही वे किसी भी विचारधारा के कट्टर अनुयायी नहीं बने।'' मार्क्सवाद के प्रति प्रासंगिक आस्था के बावजूद वे कट्टर मार्क्सवादी तथा गाँधीवाद के प्रति आस्थावान होते हुए भी वे अंध ा या अनुदार गाँधीवादी नहीं हो सके। सत्वान्वेषण की उनकी स्वतन्त्र प्रवृत्ति उन्हें निरन्तर गतिशील चिन्तक बनाये रही और वे गाँधीवाद से सर्वोदय के माध्यम से समग्र क्रान्ति की ओर उन्मुख हुए तथा समाज के एक ऐसे आदर्श के प्रतिपादन हेतु प्रेरित हुए जिसके हर पक्ष, यथा–सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, नैतिक और आध्यात्मिक को समग्र क्रान्ति के आदर्श द्वारा स्पर्श ही नहीं किया जाना था वरन् उसमें उनके अनुकूल आमूल–चूल परिवर्तन कर मनुष्य और उसके जीवन को सर्वांगीण रूप से विकसित कर एक नव–मानव या सम्पूर्ण मानव के रूप में परिवर्तित करना था। इसलिए समग्र क्रान्ति का रूप सुधारवादी होते हुए भी वह सामान्य सुधारवादी नहीं वरन क्रान्तिकारी सुधारवादी था।

संदर्भ ग्रंथ

1- J.P. - from Socialisme to Sarvodya (1957)

2. एचएल0 सिंह– *रेडफ्यूजिटिव : जयप्रकाश नारायण* (1946)

3. सुरेश राम– *लोकनायक जयप्रकाश नारायण* (1974)

4. अजीत भट्टाचार्य–जयप्रकाश नारायण : *ए पालिटिकल बायोग्राफी* (1975)

5. फारूख अरगली–लोकनायक जयप्रकाश नारायण (1977)
6. नारायण, जय प्रकाश : *सम्पूर्ण क्रांति,* (1999), सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी
7. नारायण, जय प्रकाश : *समाजवाद, सर्वोदय और लोकतंत्र* (1988), विहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना
8. नारायण, जय प्रकाश : बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय का 25 वां दीक्षांत भाषण, 18 फरवरी 1970
9. नारायण, जय प्रकाश : *सोशलिस्ट, सर्वोदय एण्ड डेमोक्रेसी*
10. शर्मा, वी.एमः शर्मा, रामकृष्ण दत्त : *भारतीय राजनीतिक विचारक,* (2005), रावत पब्लिकेशन, जयपुर एवं नई दिल्ली
11. नारायण, जय प्रकाश : *लोक स्वराज्य,* (1994) सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी
12. ब्रह्मानंद, जयप्रकाश : *नेशनल बिल्डिंग इन इण्डिया देव,* आचार्य नरेन्द्र : राष्ट्रीयता और समाजवाद